शिवादित्य-कृत सप्तपदार्थी का वैशेषिक दर्शन को योगदान

भूपेन्द्र कुमार राठौर

शिवादित्यः प्रमितिविषयाः पदार्थाः इति पदार्थलक्षणा-दारभ्य स्वीयसप्तपदार्थ्यां नावीन्यमाश्रयते। तथा द्रव्यलक्षणं च द्रव्यत्वसामान्ययोगिगुणत्वसमवायिकारणमिति, अप्त्व-जातिमत्यः शीतस्पर्शवत्यः आपः इति जललक्षणं, नित्यसम्बन्धः समवायः स चैक एव यः स्वयमसमवेत इति समवायलक्षणं तथैवाभावादिलक्षणेषु च नावीन्यं दर्शयति। तत्सर्वमत्र लेखे विस्तरेण प्रस्तूयते।

न्याय वैशेषिक के सिद्धान्तों को निर्बाध गति से आगे बढ़ाने वाले आचार्यों में शिवादित्य मिश्र कृत सप्तपदार्थी का विशिष्ट स्थान है। इसी से शिवादित्य मिश्र का नाम अमर हुआ है। यद्यपि ग्रन्थकार ने न्यायमाला, हेतुखण्डन, लक्षणमाला आदि ग्रन्थों का भी निर्माण किया है। हेतुखण्डन ग्रन्थ में उपाधिवार्तिक और अर्थापत्तिवार्तिक नामक शिवादित्य के अन्य दो ग्रन्थों की भी चर्चा है। शिवादित्य का लक्षणमाला ग्रन्थ प्रायः लुप्त हो चुका है। शिवादित्य मिश्र का समय उदयनाचार्य (१०२५-११०० ई.) के पश्चात् बादेन्द्र (११००-१२२५ई.) से पूर्व का है। पॉटर ने इनका जन्म (११००-११५० ई.) के मध्य माना है। गङ्गेशोपाध्याय ने निर्विकल्पक ज्ञान के विषय में शिवादित्य मिश्र की चर्चा की है।

व्यावर्तनीयम् अधितिष्ठति जगदिह साक्षाद्,
एतत् विषयसनमतौ विपरीतमन्यत दण्डि।
पुमानेति विशेषणमात्रदण्डः, पुन्सौ न जातिरनुदण्डमसौ च तस्य।।[१]

गंगेशोपाध्याय ने उदयनाचार्य का विशेषण और उपलक्षणा के सम्बन्ध में जो चर्चा की है, वहाँ शिवादित्य का भी उल्लेख है। भट्टवागीन्द्र के महाविद्या विडम्बन में शिवादित्य मिश्र की भी चर्चा है।[२] चित्सुखाचार्य ने तत्त्वप्रदीपिका में अनेक स्थलों पर शिवादित्य के विषय का उल्लेख किया है।[३] न्यायप्रसादिनी में

प्रत्यक्ष रूप में शिवादित्य मिश्र की 'लक्षणमाला' का उल्लेख मिलता है। चित्सुखाचार्य ने लक्षणमाला से ही अनेक सन्दर्भों को सामने रखा है। डॉ. दिनेशचन्द्र भट्टाचार्य के अनुसार 'लक्षणमाला' महाविद्या से सम्बन्धित ग्रन्थ है। वर्धमान उपाध्याय के अन्य-इच्छानयतत्त्वबोध[४] तथा जानकी नाथ भट्टाचार्य के न्यायसिद्धान्तमञ्जरी[५] में शिवादित्य मिश्र की चर्चा मिलती है। सप्तपदार्थी के आधार पर ही बाद में केशवमिश्र की तर्कभाषा, लोगाक्षिभास्कर की तर्ककौमुदी, जगदीशतर्कालंकार की तर्कामृत, विश्वनाथ की भाषापरिच्छेद तथा अन्नम्भट्ट का तर्कसंग्रह सामने आया है।

सप्तपदार्थी के नाम से ही स्पष्ट हो जाता है कि इनमें द्रव्य, गुण, कर्म, सामान्य, विशेष, समवाय और अभाव का विवेचन हुआ है। यद्यपि वैशेषिक दर्शन में सप्त पदार्थों की मान्यता है फिर भी शिवादित्य मिश्र से पहले विद्वानों ने कणादसूत्र का अनुसरण करते हुए छः पदार्थों का विवेचन किया है। ग्रन्थकार ने स्वयं लिखा है– कि पदार्थ सात होते हैं – **ते च द्रव्यगुणकर्मसामान्यविशेष-समवायाभावाख्याः सप्तैव।**[६] इस सत्ता के आधार पर ग्रन्थकार ने अपने ग्रन्थ का नाम सप्तपदार्थी लिखा है।

(१) पं. शिवादित्य ग्रन्थारम्भ में सांस्कृतिक परम्परा का पालन करते हुए भगवान् शंकर व गुरु को प्रणाम करते हैं–

हेतवे जगतामेवसंसारार्णवसेतवे।
प्रभवे सर्वविद्यानां शम्भवे गुरवे नमः।।[७]

(२) उद्देश्य खण्ड में सप्तपदार्थों का उल्लेख कर पदार्थ की परिभाषा में श्री मिश्र ने लिखा है कि– **प्रमितिविषयाः पदार्थाः** अर्थात् 'भौतिक जगत्' की वस्तुएँ ही नहीं अपितु अनुभव में आने वाले सब प्रमेय विषय पदार्थ हैं।

यहाँ '**ज्ञेयत्व**' के स्थान पर '**प्रमितिविषयत्व**' कहे जाने से इस ऐतिहासिक तथ्य पर प्रकाश पड़ता है कि शिवादित्य के समय तक 'पदार्थशास्त्र' वैशेषिक और 'प्रमाणशास्त्र' न्याय का समन्वय प्रारम्भ हो चुका था तथा वैशेषिक ने न्याय की प्रमाण-मीमांसा को अपना लिया था।

(३) सप्तपदार्थी में शिवादित्य मिश्र ने १-५५ सूत्रों का उद्देश्य खण्ड माना है। तथा ५६ से १६३ वें सूत्र तक लक्षण प्रकरण माना है।

(४) सप्तपदार्थी में द्रव्य, गुण, कर्म, सामान्य, विशेष, समवाय और अभाव इन सात पदार्थों का सम्यक् विवेचन मिलता है।

(५) सप्तपदार्थीकार ने द्रव्य की स्वतन्त्र परिभाषा दी है, उन्होंने लिखा है कि - **द्रव्यं तु द्रव्यत्वसामान्ययोगिगुणत्वसमवायिकारणं चेति।**[९] **तद्द्रव्याणि पृथिव्यप्तेजोवाय्वाकाशकालदिगात्ममनांसि नवैव।**[१०] अर्थात् द्रव्य द्रव्यत्व जाति और गुण से युक्त समवायिकारण है, जो पृथिवी-जल-तेज-वायु-आकाश-काल-दिक्-आत्मा और मन से युक्त नौ ही हैं।

(I) लक्षण प्रकरण में सर्वप्रथम स्थान पृथिवी द्रव्य का है। पृथिवी, पृथिवीत्व रूप जाति विशेष के सम्बन्ध में गन्धवती है। गन्थ पृथिवी में समवाय सम्बन्ध से रहता है। पृथिवी नित्य और अनित्य है। नित्यपृथिवी परमाणुरूपा तथा अनित्यपृथिवी कार्यरूपा है। पुनः अनित्य पृथिवी भी शरीर, इन्द्रिय, और विषय के भेद से तीन प्रकार की है। शरीर (हम लोगों का) प्रत्यक्ष सिद्ध पार्थिव शरीर है। गन्ध की ग्राहिका घ्राण इन्द्रियपृथिवी है। विषय घटादि है। पृथिवी में चौदह गुण हैं, ये हैं– रूप-रस-गन्ध-स्पर्शसंख्या-परिणाम-पृथक्त्व-संयोग-विभाग-परत्व-अपरत्व-गुरुत्व-द्रवत्व तथा संस्कार।[११]

परमाणु :-सप्तपदार्थीकार ने परमाणु का लक्षण अवयवरहित क्रियावान् बताया है। अवयव, द्रव्य का समवायिकारण है।[१२]

शरीर :- सप्तपदार्थीकार ने शरीर को भोग का अन्त्यावयवी कहा है, जिसमें अवच्छिन्न होकर आत्मा सुख - दुःख का भोग करती है।[१३]

इन्द्रिय :- सप्तपदार्थीकार ने साक्षात्कार का साधन अतीन्द्रिय किया है।[१४]

विषय :- सप्तपदार्थीकार ने ज्ञायमान आत्मा के भोग के साधन को विषय कहा है।[१५]

(II) सप्तपदार्थीकार ने जल का लक्षण जलत्व जाति से युक्त शीतल स्पर्श वाला कहा है।[१६] यहाँ शिवादित्य ने प्रशस्तपाद[१७] तथा अन्नम्भट्ट[१८] के जल - लक्षण का समन्वय कर जल का लक्षण **अप्त्वजातिमत्यः शीतस्पर्शवत्यः आपः** दिया है।[१९]

(III) शिवादित्य ने तेज का लक्षण तेजस्त्व जाति से युक्त उष्णस्पर्श वाला द्रव्य तेज किया है।[२०] इस लक्षण में प्रशस्तपादाचार्य के तेज लक्षण[२१] तथा मानमनोहरकार के तेज लक्षण[२२] को समन्वित रूप देकर तेज द्रव्य के लक्षण की सिद्धि की है।

(IV) सप्तपदार्थीकार ने वायु का लक्षण वायुत्व जाति से युक्त अरूप किन्तु स्पर्शवान् किया है।[२३] यहाँ सप्तपदार्थीकार ने वायु को वायुत्व जाति से युक्त, रूपरहित, स्पर्शवान् द्रव्य माना है।

(V) सप्तपदार्थीकार ने आकाश का लक्षण शब्द गुण से युक्त किया है। आकाश की सिद्धि घटाकाशादि के भेद से भिन्न सर्वव्यापक स्पष्ट की है।[२४]

(VI) सूर्य परिवर्तनजन्य अपरत्व को असमवायिकरण का जो आधार है तथा जो परत्व अपरत्व का अधिकरण नहीं है, वही काल है।[२५] यह लक्षण देकर आचार्य ने इसकी उत्पत्ति, स्थिति और विनाश - तीन विशेषताएँ बतायी हैं।[२६]

(VII) सप्तपदार्थीकार ने दिशा की शास्त्रीय परिभाषा को लक्षित करते हुए लिखा है कि – परत्व, अपरत्व के असमवायिकरण का आधार, सूर्य के संयोगों से अनुत्पाद्य तथा अपरत्व का अनधिकरण जो द्रव्य है, वहीं दिशा है।[२७]

शिवादित्य ने उपाधिभेद से दिशा के एकादश भेद बताये हैं।[२८] इन्होंने ऐन्द्री, आग्नेयी, याम्या, नैर्ऋति, वारुणी, वायवी, कौबेरी, ऐशानी, नागी, ब्राह्मी के अतिरिक्त ग्यारहवीं दिशा 'रौद्री' को माना है। जो रुद्र की है तथा ऊर्ध्व एवं अधोदिशा के मध्य स्थित है, जिसे सामान्यतः अन्तरिक्ष कहा जाता है।[२९] वैशेषिक दर्शनानुसार दिशा में वस्तुतः एक ही संख्या पायी जाती है, किन्तु उपाधिवंश ही दिशा के दश या ग्यारह भेद मिलते हैं।[३०]

(VIII) सप्तपदार्थीकार ने आत्मा के लक्षण को परिभाषित करते हुए लिखा है कि आत्मत्व (जाति) के (समवाय) सम्बन्ध वाला बुद्धि गुण से युक्त आत्मा है।[३१]

(IX) सप्तपदार्थीकार ने मनस्त्व जाति से युक्त, स्पर्शशून्य, क्रिया का अधिकरण द्रव्य ही मन कहा है।[३२]

(6) वैशेषिक दर्शनसम्मत सात पदार्थों में द्वितीय पदार्थ गुण हैं। सप्त पदार्थीकार ने गुण का लक्षण गुणत्वजाति से युक्त, सामान्यवान् होने पर समवायिकरण से रहित अचलनात्मक कहा है।[३३] सप्तपदार्थी में रूप, रस आदि २४ गुणों का उल्लेख है।[३४]

(I) शिवादित्य ने चित्ररूप व चित्ररस की कल्पना की है।[३५]

(II) अनुमान प्रमाण में अन्वय, व्यतिरेक तथा अन्वयव्यतिरेक - तीन स्वरूपों की चर्चा मिलती है।[३६]

(III) प्रतिज्ञा-हेतु-उदाहरण-उपनय-निगमन - इन पञ्चावावय वाक्यों का विवेचन सप्तपदार्थी में है। जो न्यायदर्शन में पहले ही वर्णित है।[३७]

(IV) उपाधि का लक्षण इस प्रकार किया गया है - **उपाधिश्च साध्यव्यापकत्वे सति साध्य समवायि**[३८] तथा किरणावली में उदयनाचार्य ने **साध्य-व्यापकत्वे सति साधनाव्यापकत्व उपाधि**[३९] किया है।

(V) शिवादित्य मिश्र ने प्राचीन वैशेषिक दर्शन के अनुसार प्रत्यक्ष और अनुमान - दो ही प्रमाणों को माना है। अनुमान खण्ड का विवेचन कुछ संक्षेप में मिलता है।[४०]

(VI) दुःख के २१ प्रकार बताये हैं।[४१]

(VII) सप्तपदार्थी में असिद्ध-विरुद्ध-अनेकान्तिक-अनध्यावासित-कालात्यापदिष्ट तथा प्रकरणसम हेत्वाभासों की चर्चा है।[४२]

(VIII) व्याप्ति में पक्षधर्मता के आधार पर सही अनुमान होता है। स्वप्नावस्था में अन्तः इन्द्रिय उस स्थिति में रहती है, जहाँ ज्ञानेन्द्रियाँ कार्य नहीं करती हैं।[४३]

(7) वैशेषिक दर्शनसम्मत सप्त पदार्थों में तृतीय पदार्थ कर्म है। कर्म के लक्षण में शिवादित्य ने लिखा है कि -प्रथम (आद्य) संयोग व विभाग के असमवायिकारण में रहने वाली कर्मत्व जाति कर्म है।[४४] कर्म के उत्क्षेपण, अपक्षेपण, आकुञ्चन, प्रसारण तथा गमन पाँच भेद हैं।[४५] शिवादित्य लिखते हैं कि उत्क्षेपणादि कर्मविहित, निषिद्ध तथा उदासीन रूप होते हैं।[४६]

(8) सामान्य पदार्थ के लक्षण में सप्तपदार्थीकार ने लिखा है कि नित्य एक और अनेकों में समवेत रहने वाला सामान्य पदार्थ है।[४७] सामान्य पर, अपर तथा परापर के भेद से तीन प्रकार का है।[४८] व्यापक मात्र अर्थात् अधिक देश वृत्ति में रहने वाला पर सामान्य है, जैसे-सत्ता। व्याप्य मात्र अर्थात् अल्पदेशवृत्ति में रहने वाला अपर सामान्य है, जैसे - घटत्वादि। व्याप्य-व्यापक रूप परापर सामान्य है, जैसे द्रव्यत्वादि। सामान्य को

जातिरूप और उपाधिरूप कहा है।[५१] सत्ता, द्रव्य, गुण एवं कर्म में रहने वाले समान तत्त्व जातिरूप हैं, पाचकत्व, अन्धत्व एवं अम्बत्व आदि उपाधिरूप हैं।

(9) शिवादित्य मिश्र ने विशेष का लक्षण सामान्य से रहित एक व्यक्ति में रहने वाली वृत्ति दिया है।[५१] इस लक्षण का वैशिष्ट्य यह है कि सामान्य- रहित रहने से यहाँ द्रव्य, गुण और कर्म तीनों की व्यावृत्ति हो जाती है तथा द्वितीय वाक्यांश से यह स्पष्ट किया गया है कि नित्य द्रव्य के साथ एक विशेष का समवाय होता है। विशेष प्रत्येक नित्य द्रव्य में पृथक्-पृथक् पाये जाने से तो अनन्त ही है। विशेष पूर्वोक्त द्रव्य-गुण-कर्म एवं सामान्य से पृथक् पदार्थ है, चूँकि ये केवल नित्य द्रव्यों में ही समवेत होकर रहते हैं।[५२]

(10) सप्तपदार्थीकार समवाय का लक्षण 'नित्य सम्बन्ध समवाय' देते हैं।[५३] समवाय एक ही है, जो स्वयं असमवेत ही होता है।

(11) शिवादित्य ने सप्तपदार्थी में अभाव का लक्षण दिया है- अभाव वह है, जिसका ज्ञान अपने प्रतियोगी के ज्ञान के अधीन होता है।[५४] अभाव के चार भेद हैं– प्रागभाव, प्रध्वंसाभाव, अत्यन्ताभाव, अन्योन्याभाव। प्रागभाव प्रतियोगी के भेद से अनन्त ही हैं।[५५]

(12) सप्तपदार्थीकार ने निःश्रेयस् (सिद्धि) का कारण ग्रन्थ में वर्णित तत्त्वों का ज्ञान बताया है।– एतेषां तत्त्वज्ञानं निःश्रेयस् हेतुः।[५६] यह शास्त्रज्ञान मोक्ष को देने वाला अर्थात् कल्याण का साधन है।[५७]

(IV) शिवादित्य ने ग्रन्थ की समाप्ति पर **'कीर्तिर्यस्य स जीवति'** को इस प्रकार अभिव्यक्त किया है–

सप्तद्वीपाधरायावत् यावत् सप्तधराधराः।
तावत्सप्तपदार्थीयमस्तु वस्तुप्रकाशिनी।।[५८]

निष्कर्षतः सप्तपदार्थी वैशेषिक दर्शन के सम्पूर्ण सिद्धान्तों का पाण्डित्यपूर्ण ढंग से बोध कराने में पूर्णतया सक्षम है। यह ग्रन्थ आदर्श प्रकरण ग्रन्थ के समान भारतीय दर्शन के तत्कालीन सारगर्भित उद्देश्यों की विवेचना करता है। फलतः यह ग्रन्थ तुलनात्मक एवं विवेचनात्मक भी है।

---

१. तत्त्वचिन्तामणि प्रत्यक्षखण्ड पृ. ८३९-३०

२. महाविद्याविडम्बन पृ. ७४, ७९, १०९

३. चित्सुखी पृ. १८३
४. अन्यइच्छानयतत्त्वबोध पृ. ६६ (प्रयाग)
५. न्यायसिद्धान्तमञ्जरी (History of Nyāya of Mithilā p. 63)
६. सप्तपदार्थी पृ. ३
७. हेतवे जगतामेव संसारार्णवसेतवे।
प्रभवे सर्वविद्यानां शम्भवे गुरवे नमः। सप्तपदार्थी पृ. - १
८. प्रमितिविषयाः पदार्थाः। सप्तपदार्थी पृ.-२
९. सप्तपदार्थी पृ. - ३
१०. सप्तपदार्थी पृ. - ५
११. सप्तपदार्थी पृ. - ६३, ११, १३७
१२. सप्तपदार्थी पृ. - ८८, ८९
१३. वही पृ. - ९१, १२, ९२
१४. वही पृ. - ९२
१५. वही पृ. - ९३
१६. वही पृ. - ६३
१७. प्रशस्तपादभाष्य पृ. - २६
१८. तर्कसंग्रह पृ. - ३१
१९. सप्तपदार्थी पृ. - ६३
२०. वही पृ. - ६४
२१. प्रशस्तपादभाष्य पृ. - २२
२२. मानमनोहर पृ. - १९
२३. सप्तपदार्थी पृ. - ६४
२४. सप्तपदार्थी पृ. - ६४
२५. सप्तपदार्थी पृ. - ६७
२६. सप्तपदार्थी पृ. - १८
२७. सप्तपदार्थी पृ. - ६६
२८. वही पृ. - १८
२९. वही पृ. - १८
३०. वैशेषिक दर्शन में पदार्थ निरूपण पृ. - १७४
३१. सप्तपदार्थी पृ. - ७०
३२. वही पृ. - ६८
३३. वही पृ. - ५६
३४. वही पृ. - ६
३५. वैशेषिक दर्शन में पदार्थ निरूपण पृ. - २८३
३६. शोधप्रबन्ध भूपेन्द्र कु० राठौर पृ. - ३७
३७. सप्तपदार्थी पृ. - ११६, ११७
३८. शोधप्रबन्ध भूपेन्द्र कु० राठौर पृ. - ३७
३९. वही पृ. - ३७

४०. वही पृ. - ३७
४१. सप्तपदार्थी पृ. - ५०
४२. सप्तपदार्थी पृ. - ११९ - १२२
४३. शोधप्रबन्ध भूपेन्द्र कु० राठौर पृ. - ३९
४४. सप्तपदार्थी पृ. - ५८
४५. वही पृ. - ७
४६. वही पृ. - ८३
४७. वही पृ. - ५८
४८. वही पृ. - ७
४९. वही पृ. - ८४
५०. वही पृ. - ४२
५१. वही पृ. - ६०
५२. वैशेषिक दर्शन में पदार्थ निरूपण पृ. - ४९५
सप्तपदार्थी पृ. - ८
५३. वही पृ. - ६१, १४३, ९
५४. सप्तपदार्थी पृ. - ६२
५५. वही पृ. - १०, ४३
५६. वही पृ. - ४९
५७. वही पृ. - १५२
५८. वही पृ. - १५३